Dr. Vandana Suman
Associate Professor
Deptt. of Philosophy
H. D. Jain College, Ara
M.A. - II Sem Philosophy
CC-09 - Indian Linguistic trends

"Abhihitanvaya Vada"

"अभिहितान्वयवाद"

अभिहितान्वयवाद के अनुसार वाक्यों से स्वतंत्र पदों के अपने अर्थ हैं। वाक्य में प्रयुक्त शब्द अपने अलग अर्थों के अनुसार ही वाक्य में स्थान ग्रहण करते हैं। पदों की यह अभिहिति (संयुक्त होना) ही वाक्यार्थ की रचना करती है। अभिहितान्वयवाद के अनुसार आकांक्षा योग्यता और सन्निधि से युक्त पदों के समूह को वाक्य कहते हैं। स्पष्टतः परस्पर आकांक्षा और योग्यता के आधार पर सन्निधि प्राप्त पद ही संयुक्त होकर वाक्यार्थ की रचना करते हैं। अतएव अभिहितान्वयवाद के अनुसार अन्विताभिधानवादियों का यह मत कि शब्दार्थ पदों को अर्थ प्रदान करते हैं, उचित नहीं। अभिहितान्वयवाद के कुमारिल भट्ट के अनुसार किसी भी वाक्य के घटक सार्थक हैं जो अभिधाशक्ति के द्वारा अर्थ को पद अपने प्रकट करते हैं, न कि दूसरे पदों से अपने संबंध अथवा संसर्ग के द्वारा। पदों का परस्पर संसर्गबोध तो पदों के पौर्वापर्य (पूर्व और अनन्तर) संबंध के आधार पर होता है। पदार्थों का यह संसर्गबोध ही वाक्य है। स्पष्टतः वाक्यार्थ मात्र पदों के संसर्ग बोध अथवा पौर्वापर्य संबंध का बोध कराते हैं न कि पदार्थ का। 'राम दशरथ के पुत्र हैं' तथा 'दशरथ राम के पुत्र हैं', इन दो वाक्यों का भेद पदों के अर्थ में कोई भेद उपस्थित नहीं करता वरन् दोनों वाक्यों के बीच यह वाक्यार्थ भेद पदों के परस्पर संबंध (पौर्वापर्य भेद) के कारण उपस्थित हुआ है। और यह वाक्यार्थ इसी भेद को स्पष्ट भी करता है। इसप्रकार अभिहितान्वयवाद के अनुसार पद पहले वाक्यार्थ पर निर्भर नहीं करते, वरन पदों के अर्थ और पदों की परस्पर अभिहिति ही वाक्यार्थ की रचना करते हैं।

अभिहितान्वयवाद में
अनुसार वाक्य का अखंड अर्थ उसके खंड अर्थ पर निर्भर करता है। पहले वाक्य के अवयव पदों का अलग-अलग अर्थ जाना जाता है, पुनः उन पद-अर्थों को परस्पर सम्बन्धित अन्वित किया जाता है। इस अन्विति के पश्चात वाक्य का अर्थ जाना जाता है। स्पष्ट है कि वाक्य में प्रयुक्त शब्द या पद सापेक्ष नहीं होते हैं बल्कि निरपेक्ष और स्वतंत्र होते हैं। इनके अर्थ भी स्वतंत्र और निरपेक्ष होते हैं वे सापेक्ष या सम्बद्ध नहीं होते हैं।
शब्दकोश शब्दों का वह भंडार है जो शब्दों के अर्थ को बतलाता है। शब्दकोश में जितने भी शब्द हैं, उनका अर्थ स्वतंत्र रूप में ही बतलाया गया है। शब्दकोश के सभी शब्दों का अर्थ निरपेक्ष होता है सापेक्ष नहीं। अतः वाक्य में प्रयुक्त शब्दों के अर्थ भी निरपेक्ष होते हैं। जैसे "गाय लाओ" वाक्य में गाय और लाओ दोनों स्वतंत्र अर्थ रखनेवाले शब्द हैं। ये एक-दूसरे से पृथक हैं। 'गाय' संज्ञासूचक पद है और 'लाना' क्रियाबोधक पद है। जबतक इन दोनों पदों में सम्बन्ध स्थापित नहीं किया जाता है तबतक इस वाक्य का अर्थ नहीं ज्ञात होता है। इन पदों में स्वतः सम्बन्ध स्थापित नहीं किया जाता है,

तब तक इस वाक्य का अर्थ नहीं ज्ञात होता है। इन पदों में स्वतः सम्बन्ध स्थापित नहीं हो पाता है। इसके लिए माध्यमों की अपेक्षा है और वह माध्यम आकांक्षा आदि है। तात्पर्य यह है कि वाक्य का अर्थ साक्षात रूप में व्यक्त नहीं होता है बल्कि असाक्षात या परोक्ष रूप से ज्ञात होता है। कुमारिल ने 'घटं आनय' उदाहरण द्वारा अपनी इस बात की पुष्टि की है। घट का अर्थ मात्र मिट्टी से बनी एक वस्तु है। यह इसी व्यापार तक सीमित है। यह अन्य पद के अर्थ से सम्बन्ध नहीं बना पाता है। इसी प्रकार 'लाओ' शब्द का अर्थ भी एक स्वतंत्र क्रिया का बोध कराता है। यह लाओ भी अन्य पद। 'लाओ' शब्द का अर्थ भी एक स्वतंत्र क्रिया का बोध कराता है। यह अर्थ भी अन्य पद से सम्बन्ध नहीं बना पाता है। 'घड़ा' शब्द को सुनने से ही घड़ा के विषय में जिज्ञासा होती है कि घड़ा क्या? 'लाओ' शब्द के सुनने से ही इस जिज्ञासा की पूर्ति होती है। इस प्रकार घड़ा और लाओ में आकांक्षा के द्वारा सम्बन्ध स्थापित होता है। केवल आकांक्षा ही नहीं बल्कि आसक्ति (सन्निधि) और योग्यता भी साथ-साथ अपेक्षित होती है। घड़ा और लाओ दोनों शब्दों का उच्चारण साथ-साथ प्राप्त होता है। दोनों शब्दों में वह

योग्यता है कि वाक्य का अर्थ स्पष्ट हो जाता है। श्रोता वक्ता के तात्पर्य को अच्छी तरह हृदयंगम करता है। अतएव वाक्यार्थ वाक्य में प्रयुक्त पदों के स्वतन्त्र अर्थों में परस्पर सम्बद्ध होने के पश्चात ज्ञान होता है। इस दृष्टिकोण से वाक्य सावयव होते हुए भी अन्वित अर्थ प्रकट नहीं करता है, बल्कि स्वतन्त्र अर्थों के परस्पर सम्बद्ध होने पर अभिहित होता है।

अभिहितान्वयवाद के अनुसार यह आवश्यक नहीं है कि वाक्य में प्रयुक्त संज्ञाबोधक शब्द का अर्थ उसमें प्रयुक्त क्रियात्मक शब्द के अर्थ के साथ जुड़ने पर ही वाक्यार्थ सम्भव हो। कुमारिल के अनुसार विवरणात्मक वाक्यों में जहाँ किसी क्रिया के सम्पादन का निर्देश नहीं होता, पदों से केवल अलग-अलग अर्थों की ही स्मृति होती चलती है और इन अर्थों से ही इनके एक वाक्यार्थ के रूप में संहति का बोध उत्पन्न होता है।" जैसे — "गाय उजली है।" इस वाक्य में 'गाय' संज्ञाबोधक पद है, पर उसका सम्बन्ध किसी क्रियाबोधक पद से नहीं है। गाय और उजला दोनों के अर्थ स्वतन्त्र एवं अलग-अलग हैं। 'उजला' गुणवाचक पद है जिसका सम्बन्ध अन्य संज्ञावाचक पद

सं भी होता है। किन्तु गाय और
उजला दोनों शब्दों का अलग-अलग
और स्वतंत्र अर्थ सामान्य प्रयोग या
जाति के रूप में औपाधिक होता है। जैसे गाय का
अर्थ गोत्व अर्थात् गौ-जातिका है।
इसलिए संसार की प्रत्येक गायों को
गाय ही कहा जाता है। इसीप्रकार उजला
का अर्थ उजलापन या उजला-सामान्य है।
संसार की जितनी भी वस्तुएं उजली
है इन सब में उजलापन निहित होती है।
इसलिए उन्हें उजली वस्तु कही जाती है।
सामान्य प्रत्यय होने के कारण शब्दों के
अर्थ नियत होते हैं। अतः वाक्य में
प्रयुक्त शब्दार्थों का सम्बन्ध भी नियत होता
है। फलतः वाक्यार्थ नियत होते हैं। स्पष्ट
है कि वाक्यार्थ का आधार जाति या सामान्य
है न कि जाति विशिष्ट व्यक्ति है।
जाति ही शब्द का संकेतित अर्थ है।
परन्तु इसे शब्दबोध जाति के साथ
अविनाभाव रूप से रहनेवाले व्यक्ति का
भी बोध हो जाता है। जाति शब्द की
अभिधा शक्ति द्वारा ज्ञात होती है, तद्व्यक्ति
का ज्ञान शब्द की लक्षणा शक्ति से
ज्ञान होता है। अतएव जातिविशिष्ट
व्यक्ति का ज्ञान अभिधा द्वारा ही
होता है। जबकि कुमारिल प्रभाकर
के इस मत से सहमत नहीं है। जाति
और व्यक्ति को अर्थ का आधार
अलग-अलग माना गया है। चूंकि
अभिधा द्वारा जाति का ज्ञान होता

है, इसलिए शब्द का मूल अर्थ जाति या सामान्य है। लेकिन अभिहित होने के कारण व्यक्ति का अर्थ बोध होता है। जाति में ही व्यक्ति अन्तर्निहित है। जाति द्वारा ही वाक्य में प्रयुक्त पदों का अर्थ अभिव्यक्त होता है। तात्पर्य है कि वाक्य में प्रयुक्त पदों में दूसरी शक्ति नहीं होती है, बल्कि पदों के अर्थ में यह शक्ति वर्तमान है। यही कारण है कि अभिहितान्वयवाद शब्द के विशेष अर्थ को स्वीकार नहीं करता है बल्कि स्वरूप मात्र अभिमत आविर्भूत या अनुबद्ध अर्थ को स्वीकारता है। अन्विताभिधानवाद शब्द के विशेष्य और सम्बद्ध अर्थ को स्वीकारता है। पार्थसारथि मिश्र ने इन दोनों सिद्धान्तों का सार इन्हीं शब्दों में व्यक्त किया है।"

कुमारिल ने पदों से वाक्यार्थ निर्माण की प्रक्रिया का वर्णन इस प्रकार किया है प्रथमत: पद अपनी अभिधाशक्ति (अभिधावृत्ति) से अपने अर्थों (पदार्थों) को अभिहित करते (बताते) हैं। तदनन्तर उन अभिहित अर्थों की आकांक्षा, योग्यता और सान्निध्य को देखते हुए उनका परस्पर अन्वय (संबंध) हो जाता है। इस प्रकार पदों से अभिहित हुए अर्थों का परस्पर अन्वय ही (अभिहितान्वय = अभिहित + अन्वय) वाक्यार्थ की रचना करता है। इस मत के अनुसार भाषा की इकाई पद है। पद न केवल अर्थ की इकाई हैं वरन अपने स्वतन्त्र अर्थों के आधार पर ही वाक्यार्थ की रचना में समर्थ भी हैं।

7

समीक्षा (आलोचना)

कुमारिल ने वाक्यार्थ बोध में संसर्ग या सम्बन्ध अर्थों का आधार लक्षणा को माना है। किन्तु लक्षणा अभिधा पर आधारित है तो है। इसलिए लक्षणा पर आधारित अर्थ स्वतंत्र नहीं हो सकता। मूल अर्थ अभिधा ही है। अतः वाक्यार्थ का आधार लक्षणा मानना अनुचित है।